गुणमञ्जरी ने घर में प्रवेश करके चतुर्दिक अवलोकन किया और चन्द्रप्रभा के पास जाकर बैठ गई। चन्द्रप्रभा ने मुंह उठा कर नही देखा सोती ही रह गई। मानो देर से वह सूनी कार्य्य ही में नियुक्त है। गुणमञ्जरी ने कुछ देर तक चुप रह कर पूछा "चन्द्रप्रभा ! ऐसी चुप होकर क्यों बैठी है ?"

चन्द्रप्रभा मुंह उठाकर कुछ हंसी, अपने मनमें समझी कि हंसने से माता हमारे मन का भाव न समझेगी। किन्तु वह चेष्टा निष्फल हुई। गुणमञ्जरी ने उसके मुंह पर स्पष्ट विषन्नता का चिन्ह देखकर फिर पूछा, "आज तुझे क्या हुआ है ?" चन्द्रप्रभा ने मुंह उठाकर फिर हंसना चाहा किन्तु आशानुरूप कृतकार्य्य नहीं हुई। उलटा हंसी के साथही दोनों आंखों से दो धारा बहने लगी। चांदनी और जल एक साथही दिखलाई पड़े। गुणमञ्जरी चन्द्रप्रभा की ठुड्डी अपने हाथ पर रखकर बोली, "बेटी चिन्ता करके क्या करोगी, अदृष्ट का लिखा कौन मिटा सकता है ?" माता की सकरुण बात सुनकर चन्द्रप्रभा पूर्वा-पेक्षा अधिक रोने लगी।

चन्द्रप्रभा कुलीन कान्यकुब्ज की कन्या है। जन्मावधि से मातामह के यहां ही रहती है। उसके पिता का चार ब्याह हुआथा। उसमें एक स्त्री के गर्भ से एक पुत्र और एक कन्या थी और तीनों में दो को सन्तानादि नहीं हुए। चन्द्रप्रभा की माता को चन्द्रप्रभा एक मात्र सन्तान थी। उसके पिता का नाम आनन्दविग्रह था।

आनन्दविग्रह जिस स्त्री के गर्भ से एक पुत्र और एक क-न्या जन्म हुआ था, उसी को लेकर संसार करते थे और

रीत का कभी समाचार भी नहीं लेते थे। क्रम से चन्द्रप्रभा विवाह योग्य हुई। इससे उसके मामा ने आनन्दविग्रह को पात्र अनुसन्धान करने को पत्र लिखा।

आनन्दविग्रह ने उस पत्र में मनोयोगही नहीं दिया। क्योंकि वह समझे हुए था कि चन्द्रप्रभा को सत्पात्र को देना उसके मामा का आवश्यकीय कर्म है। वस्तुतः चन्द्रप्रभा का मातुल भी पत्र लिखकर निश्चिंट नहीं था। वह आप भी पात्र अनुसन्धान करने लगा।

बहुत खोजा किन्तु आनन्दविग्रह के कुल के उपयुक्त कोई पात्र नहीं मिला।

इन्हीं दिनों में गुणमञ्जरी ने एक पात्र देखा। पात्र की अवस्था अनुमानिक बाईस बरस होगी। नाम पूर्णप्रकाश। चन्द्रप्रभा के मामा के गृह के पास एक भाड़े के घर में पूर्ण प्रकाश का बहनोई दुश्चिकित्स्य रोगाक्रांत होकर कालेज के डाक्टर से चिकित्सा कराने के मानस से आकर उतरा हुआ था। पूर्ण प्रकाश कौनिंग कालेज में पढ़ता था। और सर्वदा आकर भगिनी और भगिनीपति को देख जाता था। गुणमञ्जरी ने उसको देख कर उसको जामाता करने की मन में दृढ़ वासना किया। गुणमञ्जरी ने पूर्णप्रकाश की बात अपनी भाई से कहा। उनके भ्राता का नाम गोकुलोत्सव था। गोकुलोत्सव ने पूर्णप्रकाश के कुल का परिचय भी लिया। परिचय से जाना पूर्ण आनन्दविग्रह के कुल से कुछ नीचा है।

गोकुलोत्सव का आनन्द दुःख से बदल गया। पात्र देखने में सुनने में विद्या में बुद्धि में सर्वांग में सुन्दर है। किन्तु आन

न्द्रविग्रह की कुल से नीचा है किस प्रकार से उसको कन्यादान दिया जायगा।

गुणमञ्जरी ने पहिले पूर्ण को जिस भांति देखा था च-न्द्रप्रभा ने भी उसी भांति एक दिन पूर्ण को देखा था। अर्थात् एक दिन वह अपनी खिड़की में बैठी थी उसी समय पूर्ण अपने भगिनीपति को देखने आया। पूर्ण को देखतेही चन्द्रप्रभा का मन पूर्णरूप से उस पर आकृष्ट हो गया। प्रणय सदा इसी भांति आरम्भ होता है। चिन्ता करके, स्वभाव विद्या धन की परीक्षा करके कब किसका किसी से परिणय हुआ है? बारूद अग्नि स्पर्श करतेही जैसे प्रज्वलित होता है, काष्ठादि की भांति रह रह कर नहीं जलता, उसी भांति प्रणय दर्शन मात्रही से उत्पन्न होता है। धीरे धीरे कभी प्रनय की उत्पत्ति नहीं होती।

रोगी विश्राम लाभ की आशा से जितनी करवट बदलता है उतनी ही उसकी निद्रा दूर होती है। उसी भांति प्रेमी प्रेम को जितना ही गोपन करना चाहता है उतनाही प्रकाश हो जाता है।

थोड़े ही दिन में गुणमञ्जरी चन्द्रप्रभा के मनका भाव जान गई। किन्तु पूर्ण उनके स्वामी के कुल से नीचे कुल का है इससे चन्द्रप्रभा के साथ उसका व्याह असम्भव है यह जान कर निज तनया को नाना प्रकार आदेश देकर पूर्ण की चिन्ता [illegible]ने लगी। चन्द्रप्रभा को खिड़की में भी नहीं बैठने देती। उसको निकम्मी देखती तो उसी समय किसी कार्य में [illegible] करती थी। किन्तु शासन का फल सुफल है यह कि-[illegible] है। चन्द्रप्रभा जब कभी अकेली रहती तो अनवरत

पूर्ण प्रकाश की चिन्ता में ही मग्न रहती और जब कोई कहीं न रहता तो खिड़की में जाकर बैठती थी। पूर्ण के भगिनी पति को अब पूर्ण प्रत्यह ही देखने आता है। पीड़ा का कुछ उपशम हुआ है किन्तु पूर्ण का आना घटा नहीं और भी बढ़ा। एक दिवस पूर्ण बहनोई को देखकर अपनी रहने के स्थान में चला गया। जितने क्षण पूर्ण रहा तब तक चन्द्रप्रभा अनिमेष लोचन से पूर्ण को देखती थी जब पूर्ण चला गया तब चन्द्रप्रभा खिड़की से हटकर घर में बैठकर चिन्ता करने लगी। उसकी आंख से अज्ञात भाव से दो तीन बूंद आंसू टपक पड़े। उसी समय गुणमञ्जरी तनया को देखने को जिस घर में चन्द्रप्रभा थी वहीं आई और बहुत सांत्वना वाक्य कहने लगी।

दूसरा स्तवक ।

आभास ।

खल बढ़ई बल करि थके कटै न कुबति कुठार ।
आलबाल उर झालरी खरी प्रेम तरु डार ॥ १ ॥

[बिहारी]

विष एक बार मस्तिष्क में चढ़ने से फिर उसकी चिकित्सा करनी वृथा होती है। चन्द्रप्रभा को उपदेश वाक्य असाध्य रोग में औषध की भांति हुआ। चन्द्रप्रभा माता की बात मन देकर सुनती है और तदनुरूप कार्य करने की भी दृढ़ प्रतिज्ञा होती है किन्तु सब वृथा हो जाता है। उसका मन अब अपने वश में नहीं है। बहती नदी को पयान्तर खोदकर अनायास से नूतन मार्ग से लेजा सकते हैं किन्तु प्राचीर निर्माण करके नदी के

प्रवाह को कोई नहीं रोक सकता। चन्द्रप्रभा का मन पात्रान्तर से विमुग्ध किया जा सकता था किन्तु उसकी माता ने यह न करके एक बारगी गुप्त करने का मानस किया। इसी से सब निष्फल हो गया।

गुणमञ्जरी ने जब देखा कि उसका सब यत्न विफल हुआ तो उसने अपने भ्राता से फिर पूर्णप्रकाश की बात कही। पूर्ण सर्वांश सुपात्र है, किन्तु उसके साथ चन्द्रप्रभा का व्याह देने से आनन्दविग्रह का कुलमान न बचेगा। इसमें गुणमञ्जरी की क्या हानि है? गुणमञ्जरी को पुत्र सन्तान नहीं है कि उसका कुल नष्ट होगा। सौत के पुत्र का कुल रहने से भी गुणमञ्जरी को कोई लाभ नहीं है। उसके कुल रखने को वह अपनी कन्या का प्रान क्यों बध करेगी?

गोकुलोत्सव ने सुनकर भगिनी को बहुत समझाया, कहा "कुलीन का कुल नष्ट करना महापाप है। इसमें यत्न करना उचित नहीं"

गुणमञ्जरी बोली, "तुम लोग यदि शीघ्र चन्द्रप्रभा का व्याह न कर दोगे तो हम आप पूर्ण के साथ उसका व्याह कर देंगे।"

गोकुलोत्सव बोले, "बहिन और दस दिन विलम्ब करो। इतना दिन गया है तो और दस दिन में क्या होजायगा? एक पत्र और लिखते है देखें क्या जवाब मिलता है।"

गुणमञ्जरी बोली, "अच्छा पत्र लिखो, किन्तु हम आज [illegible]रहें दिन व्याह कर देंगे। फिर न मानेंगे। न और किसी को खबर देंगे। दिन साइत भी न देखेंगे।"

गोकुलनाथ बोले, "अच्छा दस दिन तो शान्त होकर बैठो फिर जो इच्छा हो करना। हम आजही पत्र लिखेंगे दस दिन के भीतर अवश्यही पत्र का उत्तर आजायगा।"

पूर्ण को देखकर जैसे चन्द्रप्रभा का मन हुआ था चन्द्रप्रभा दर्शन से उसी भांति पूर्ण का भी मन हो गया। पूर्ण ने दो एक दिवस चिन्ता किया चन्द्रप्रभा की लालसा हमारी दुराशा मात्र है। किन्तु जब गुणमञ्जरी आपही उसबात पर आरूढ़ हुई तब पूर्ण को वह आशा दुराशा नहीं बोध हुई। जो अग्नि पूर्ण इच्छा पूर्वक आयास से निर्वापित कर सकते थे उसको गुणमञ्जरी ने वायु की भांति होकर दिन दिन और भी प्रबल कर दिया। पूर्ण पहिले २ सप्ताह एक बेर आते थे किन्तु अब दिन में दो तीन बेर आने लगे। पूर्ण की भगिनी निषेध करने को थी किन्तु संकोच से वह नहीं कह सकी। पूर्ण का बहनोई दिन भर अकेला रहता था आंख के रोग से दिन भर लिख पढ़कर भी कालक्षेप नहीं कर सकता था। इससे उसके पास बैठकर कोई बात चीत करे तो वह बहुत प्रसन्न होता था। इसी से वह जिसमें पूर्ण पहिले से विशेष आवै इसकी चेष्टा करने लगा। संक्षेपतः पूर्ण को उसने इसी कारण कोई उपदेश नहीं दिया। पूर्ण का लिखना पढ़ना सब बन्द हो गया। घर में जब तक रहते थे कबतक भगिनीपति को देखने जायंगे यही चिन्ता करते थे। भगिनीपति के पास से घर में फिरकर जाने की चिंता से सन्तापित होते थे। गुणमञ्जरी पूर्ण का उत्साह बढ़ाती जाती थी। एक दिन भी उसने ऐसी बात नहीं कही कि चन्द्रप्रभा के साथ उसका ब्याह

नहीं हो सकता। किन्तु चन्द्रप्रभा को हमने कभी उत्साह की बात नहीं कही। उसको सर्वदा यही कहती थी कि यह व्याह असम्भव है। यही समझाने की सर्वदा चेष्टा करती थी।

सब कोई इसी भांति चिंतित हैं। इसी समय में गोकुलोत्सव ने अपने बहनोई को पत्र लिखा। दस दिन के भीतर ही पत्र का उत्तर आ गया। आनन्दविग्रह ने विनती पूर्वक एक महीना और अपेक्षा करने को लिखा और लिखा कि एक महीने के भीतर ही वह उपयुक्त पात्र साथ लेकर लखनऊ पहुंच कर शुभ कार्य सम्पन्न करेंगे।

गोकुलोत्सव ने भगिनी को पत्र का मर्म कह कर तब तक ठहरने का अनुरोध किया। गुणमञ्जरी बड़ी विपद में पड़ी पूर्ण से कहा था कि दस दिन के पीछे व्याह कर देंगे क्योंकि उसको विश्वास था कि इतने अल्प दिन के भीतर कभी पत्र का उत्तर नहीं आसकता। किन्तु अब चिन्ता करके ही क्या होगी। लज्जा अवनत मुखी होकर पूर्ण को भगिनी से पत्र का मर्म कह कर कहने लगी, पूर्ण को कहना व्याह की बात अब कच्ची समझे।

तीसरा स्तवक।

आशा निराश।

"फलक तूने इतना हंसाया न था। कि जिसके बदले यं ने लगा।"

(हसन)

पूर्ण प्रत्यह जिस समय भगिनीपति को देखने आते थे उस समय को अतिक्रम करके सन्ध्या के समय भगिनी

पति के गृह में आये ॰

चन्द्रप्रभा के पिता के पास पत्र आज दस दिवस हुआ गया है, आज उत्तर न आवे तो चन्द्रप्रभा उसकी होगी ॰ पूर्ण इसी शुभचिन्ता में समस्त दिन बिता कर सन्ध्या को भगिनीपति के घर में आए॰ सन्ध्या पीछे घडी दो घडी रात तक रह कर एकबारगी दस दिवस का समाचार लेकर जायंगे॰

पूर्ण ने मार्ग में चिन्ता करते करते आकर भगिनीपति के दरवाजे में आघात किया॰पूर्ण की भगिनी ने जाकर दरवाजा खोल दिया किन्तु पूर्ण की भगिनी का मुंह आज कुछ विषस है॰ किन्तु पूर्ण का हृदय चन्द्रप्रभामय हुआ है॰ उस समय उसमें दूसरे का ध्यान पाना असम्भव है॰इसी से पूर्ण को आंख में उसकी भगिनी का मुख कुछ भी विलक्षण नहीं बोध हुआ॰ और २ दिवस की भांति पूर्ण जाकर अपने भगिनीपति के पास बैठे॰ और दिन गुणमञ्जरी आप या उनका नियुक्त कोई न कोई व्यक्ति उनके आने की अपेक्षा करता था और वह आते ही उन लोगों के मुंह से दिन का समाचार पाते थे॰ किन्तु आज किसी ने भी उनके पास आकर समाचार नहीं कहा॰ पूर्ण अति चंचल हुए॰ उनके भगिनीपति जो बात कहते थे वह उनके कान में प्रविष्ट नहीं होती थी॰ उनके भगिनीपति एक बात कहकर उत्तर के वास्ते प्रतीक्षा कर रहे हैं किन्तु पूर्ण कुछ सुनते ही नहीं॰ अथच संक्षेप मे " हां " के स्थान पर "नहीं" वा " नहीं " के स्थान पर " हां " उत्तर देते हैं॰ पूर्ण के भगिनीपति पूर्ण का चित्त चांचल्य देख कर चमत्कृत हुए॰ वह उसका कारन सब जानते थे किन्तु वह पूर्ण को किस भांति कुसं-

वाद देंगी यही चिन्ता करने लगी। और जो बात चीत होती थी वह बन्द करके चुप होकर बैठ रहे।

सन्ध्या हुई, दीप बाला गया, जिस घर में पूर्ण और उनके भगिनीपति बैठे थे उस घर में भी दासी दीप दे गई। हठात् उजियाला देख कर पूर्ण ने घर के चारो ओर दृष्टि निक्षेप किया और जब किस उपलक्ष से वे बैठे रहे यह नहीं स्थिर कर सके तो भगिनीपति से बोले, "आज हम जाते हैं।"

पूर्ण के भगिनीपति ने कहा, "अच्छा अब देर भी बहुत हुई है।"

पूर्ण यह बात सुन कर खड़े हुए। तब पूर्ण के भगिनीपति इस भांति मुंह बनाकर कहने लगे कि जैसे कोई बात पूर्ण को कहने भूल गए थे अब स्मरण आने से कहते हैं।

"हां पूर्ण, तुम्हारा एक संबाद है सुन जाओ।" भगिनीपति की बात सुनकर पूर्ण का हृत्पिण्ड ऐसे जोर से वक्ष:स्थल में प्रतिघातित होने लगा कि पूर्ण को बोध हुआ कि उन के भगिनीपति उस आघात का शब्द सुन रहे हैं। पूर्ण जहां खड़े थे वहां ही बैठ कर पूछने लगे "क्या संवाद है?" पूर्ण के भगिनीपति बोले, "चन्द्रप्रभा के साथ तुम्हारा जो व्याह होने की बात चीत थी उसमें बाधा पड़ने से वह व्याह नहीं होगा।

पूर्ण ने आग्रह से पूछा, "किसने कहा है?"

पूर्ण के भगिनीपति बोले, "चन्द्रप्रभा की माता ने दासी से समाचार भेज दिया है। दासी कह गई है कि वह लज्जा से ...प नहीं आसकीं इस से हम से कहला भेजा है," पूर्ण ने ...ड़ी देर चुप रह कर फिर पूछा।

" कहां व्याह होगा? "

पूर्ण के भगिनीपति बोले, दासी ने कहा है चन्द्रप्रभा के पिता उपयुक्त पात्र लेकर शीघ्र लखनऊ पहुंच कर अपनी कन्या का व्याह कर देंगे " पूर्ण को उठ जाने की शक्ति शेष न रही। तथापि बोले, " सो तो हम पहलेही जानते थे। हमको कभी आशा नहीं थी कि हमारे साथ चन्द्रप्रभा का व्याह होगा। कुलीन लोग कन्या भला हमको क्यों देंगे? हां वही लोग कहते थीं इस से हम भी हुंकारी भरते थे। "

पूर्ण के भगिनीपति पूर्ण की बात पर कुछ नहीं बोले पूर्ण भी कुछ देर मौन भाव से बैठ रह कर पीछे वहां से उठे और अपने घर चले आए। वह रात पूर्ण की कैसी बीती यह सहज ही अनुभव हो सकता है। दूसरे दिवस सबेरे उठकर पूर्ण प्रकाश ने लिखने पढ़ने में मन लगावेंगे यह प्रतिज्ञा किया। पुस्तकादि खोल कर देखा कि सब प्रथम पत्र से फिर आरम्भ करना होगा। इधर गिन कर देखा परीक्षा को भी अब अधिक दिन नहीं है। सात पांच चिन्ता करके स्थिर किया इस वत्सर परीक्षा न देंगे। तब लखनऊ रहने ही की क्या आवश्यकता है? सब चिन्ता करके पूर्ण प्रकाश उसी दिन पुस्तकादि लेकर अपने घर चले गए। रेलगाड़ी जब चलने लगी उस समय पूर्ण ने कितनी दीर्घ निश्वास त्याग किया यह कहना दुःसाध्य है। जब तक लखनऊ अदृश्य नहीं हुआ तब तक पीछे ही दृष्टि किए रहे थे। देखते देखते लखनऊ अदृश्य हुआ। पूर्ण वस्त्र से मुंह छिपा कर अश्रुपात करने लगा।

चतुर्थ स्तवक ।

कुलीन जामाता ।

"मर्कट बदन भयंकर देही। देखत हृदय क्रोध भा तेही। देखि शिवहि सुर तिय मुसकाहीं। बर लायक दुलहिन जग नाहीं"

[गो० तुलसीदास जी]

आश्रय वृक्ष भग्न होने से आश्रित लता की जैसी दुर्दशा होती है पूर्णप्रकाश के विरह में चन्द्रप्रभा का चित्त उसी भांति हुआ। पूर्ण के साथ उसने कभी बात भी नहीं की थी। तथापि पूर्ण के जाने से उसका हृदय शून्य, गृह शून्य, सब संसार शून्य होगया। गुणमञ्जरी ने एक दिन भी चन्द्रप्रभा का पूर्ण के साथ व्याह होगा यह उससे नहीं कहा था। किन्तु चन्द्रप्रभा के चित्त में एक प्रकार का विश्वास का मूलच्छेद होगया। चन्द्रप्रभा अपने मन का भाव गोपन करने का यत्न करने लगी। किन्तु किसी भांति भी कृतकार्य नहीं हो सकी। पहिले जिस स्थान में बैठ कर पूर्ण को देखती थी उसी स्थान में सर्वदा ही बैठने जाती थी। किन्तु अब भ्रम से भी उस गृह में नहीं जाती। चन्द्रप्रभा के मुंह की हंसी जैसे कहीं चली गई। चिन्ता करते २ वर्ण मलिन और शरीर सूखने लगा। उन के पिता ने स्थिर किया था कि एक महीने के भीतर जो उपयुक्त पात्र प्राप्त [illegible] अत्यन्त पहुंचेंगे वह एक महीना बीत गया पात्र प्राप्त होकर आना दूर रहे कहीं से एक पत्र भी नहीं मिला। गुणमञ्जरी भी बड़ी चिन्तित हुई। कन्या के दुःख से जो [illegible] कन्या के दुःख से भी उसका दुःख था। अब

प्रभा की कृशाङ्गी देख कर गुणमञ्जरी को बड़ी ही चिन्ता हुई
पूर्ण को बिदा कर दिया इस कारण अब हृदय अनुग्लानि से
कुम्हलाने लगा। कितनी बार पूर्ण को पत्र लिखने चली फिर
आपही निरस्त होरही।

जिसको एक बार बिदा करदिया है अब किस मुंह से उस
को फिर बुलावें? इसी भांति जब तीन महीना गत होगया
तब गुणमञ्जरी नहीं रह सकी औ पूर्ण को एक पत्र में उसने
लिख भेजा कि ब्याह का सम्बन्ध अब निश्चय होगया। केवल
उनके आगमन की प्रतीक्षा है। चन्द्रप्रभा का पिता यदि रति
पति सा रूपवान, बृहस्पति सा विद्वान् और कुल में कुलीनों
का अग्रगन्य पात्र ले आवेगा तब भी गुणमञ्जरी चन्द्रप्रभा को
पूर्ण ही के हाथ में समर्पण करेगी।

गुणमञ्जरी ने यह सोच करके पूर्ण को पत्र लिखा कि यदि
वह अपनी चन्द्रप्रभा को ही सुखी न कर सकी तो उसके जीव
न का फल क्या है? कौलीन्य के अनुरोध से वह अपने स्वामी
के वर्त्तमान में भी वैधव्य यन्त्रना भोग कर रही है।

अपनी प्यारी बेटी को वह कभी ऐसी यन्त्रना न भोगने
देगी यह निश्चय करके वह चन्द्रप्रभा से बोली,

"बेटा! अब मत रो। देखो हमने अभी पूर्ण को पत्र लिखा
है। पूर्ण के आते ही उसके साथ तुम्हारा ब्याह कर देंगी और
किसी की भी बात न सुनेंगी।"

जिस दिवस प्रातःकाल गुणमञ्जरी ने पूर्ण को पत्र लिखा
था उसी दिन सन्ध्याकाल में आनन्दविग्रह हृष्ट चित्त से पात्र
सङ्ग लेकर गोकुलालय के गृह में उपस्थित हुए। पात्र का ना-

म ढुंढिराज० देखने में दीर्घाकार कृष्णवर्ण और कृश था० अव-स्था अनुमान चौतीस बरस की० सिर के बाल दो एक पकने लगी हैं और साम्हने के दो दांत भी गिर गए हैं० यही पात्र हैं० इन्ही के अनुसन्धान करने में आनन्दविग्रह का तीन महीना लगा है० वह गोकुलोत्सव का दूसरा पत्र पाते ही घर से निक ले थे० नाना स्थान में अनुसन्धान किया किन्तु कहीं भी सुपा त्र नहीं मिला० अर्थात् उनके कुल के समान नहीं मिला० पी छे ढुंढिराज से साक्षात् हुआ० व्याह करना ही ढुंढिराज का रोजगार है० वह अब तक ग्यारह कन्या को व्याह कर चुके हैं अर्थात् उन सबों का कुमारी नाम मिटा चुके हैं० चन्द्रप्रभा को उद्धार करैं तो पूरी बारह हों० आनन्दविग्रह ढुंढिराज को पाकर बहुत ही सन्तुष्ट हुए० और २ बात के पीछे चन्द्रप्रभा का व्याह करने का प्रस्ताव किया० ढुंढिराज बोले, उपयुक्त दहेज मिले तो व्याह करने में कोई बाधा नहीं है० और एक बात यह भी है कि वह आप स्त्री के भरण पोषण का भार नहीं लेंगे० इसमें यदि आनन्द विग्रह सम्मत हों तो दिन स्थिर करके कह जाने से ही वह कन्या के घर उपस्थित होंगे०

आनन्दविग्रह भावी जामाता को आशीर्वाद देकर बोले, "तुम चिरंजीवी हो० तुम्हारे ऐसा सुबुद्धि मनुष्य आज कल मिलना कठिन है० तुम यथार्थ ही कुलीन हो० तुमने जो सब बात कही हम सब में सम्मत हैं०कन्या के भरण पोषण का भा- र तुमको नहीं लेना होगा० यह हम स्टाम्प पर लिख दे सक्ते हैं० वह जन्म से मातामह के यहां है० व्याह के पीछे भी व हीं रहेगी० अब दहेज ठीक होजाना चाहिए० "

ढुंढिराज बोले, दहेज की बात पात्री की अवस्था के ऊपर निर्भर है। कन्या की जितनी ही अवस्था विशेष होगी उतना ही दहेज अधिक लगेगा। यह बात आप नहीं जानते हैं सो तो नहीं है? आप भी तो कुलीन हैं।" आनन्दविपद बोले, "तुमने जो कहा सो सत्य है किन्तु हमारी अवस्था पर दृष्टि रखकर दहेज की बात कहो। हमारी कन्या की अवस्था सो अधिक नहीं है। बहुत हो तो चौदह बरस"

ढुंढिराज ने कुछ चिन्ता करके उत्तर दिया जै बरस की हो हिसाब से बरस पीछे दो दो रुपया दीजिए। आप से ज्यादे प्रार्थना नहीं करते। आनन्द विपद उन को बहुत कह सुन कर १५) रुपये पर राजी करके साथ लेकर चले। समस्त मार्ग चिन्ता करते करते आए हैं कि ससुराल जाते ही उनका कितना समादर होगा। किन्तु वह आशा कितनी फलवती हुई यह पीछे प्रगट होगा।

पंचम स्तवक।

स्वपत्नी सम्भाषण।

सहृदो हित कामानां यः शृणोति न भाषितम् विपदो नि हिता स्तस्य

पूर्ण की भगिनी का नाम मधुरिमा है। और उसके भगिनीपति का नाम मन्दिरानन्द है। मन्दिरानन्द की आंख में मोतियाबिन्द होगया था। यह आंख बनवाने को लखनऊ आए थे। पहिले आंख बनवाने के उपयुक्त नहीं थी इससे उन को बहुत दिन लखनऊ में रहना पड़ा था। पीछे आंख बनने

के योग्य होने से डाकतर ने एक आंख बना दिया।

डाकतर बोला, एक आरोग्य होने से दूसरी बनाई जाय-गी। पूर्ण जब अपने घर गया तब एक आंख अच्छी भांति आ-रोग्य हो आई थी। किन्तु तब भी डाकतर ने उन को लिखना पढ़ना या जिस काम में दृष्टि स्थिर रखना पड़े उस कार्य कर-ने का निषेध किया था। पूर्ण लखनऊ में जब तक थे नित्य ही मन्दिरानन्द को देखने आते थे। समस्त दिन उन के पास र-हते थे, बात चीत करते या शतरंज खेलते थे। किंतु पूर्ण के लख-नऊ छोड़ कर चले जाने से मन्दिरानन्द को अकेला रहना दु-सह व्यापार होगया। उनकी स्त्री पाक इत्यादि अन्यान्य गृह कार्य में व्याप्त रहती थी, मन्दिरानन्द के पास बैठकर बात करे इतना अवकाश उसको नहीं था। पूर्ण के जाने के पीछे पहिला दिन मन्दिरानन्द ने किसीप्रकार से काटा। किन्तु दूसरे दिवस निष्कर्मा नहीं रह सके एक पुस्तक पढ़ना आरम्भ कर दिया। अपने मनमें सोचा था दो एक पृष्ठा पढ़कर रख देंगे, किन्तु अपने दुर्भाग्य से पुस्तक ऐसी अच्छी लगी कि उसको विना शेष किए नहीं रख सके। प्रातःकाल आठ नौ बजे आ-रम्भ किया था रात्रि को दस बजे समाप्त किया। मधुरिमा ने बार बार निषेध किया। किन्तु मन्दिरानन्द ने उसकी बात नहीं सुनी, बोले।

कुछ भी कष्ट तो नहीं होता तब क्यों न पढ़ें ? आंख रहते अब कितने दिन तक अंधों की भांति बैठे रहें ! ”

मन्दिरानन्द ने स्त्री की बात नहीं सुनी और [illegible] दिन समाप्त किया। पुस्तक समाप्त करके मन्दिर[illegible]

मे सोए। कोई भी असुख नहीं था। किन्तु पिछली रात आंख की दरद से नींद खुल गई। जागकर देखा कि अब आंख खोल कर नहीं देख सकते हैं। किसी भांति वह रात बीती। दूसरे दिवस डाकतर को बुलाकर फिर आंख दिखलाया। डाकतर देखकर बोला,

"यह आंख पूर्व की भांति नहीं होगी किन्तु दूसरी आंख चीरने से अच्छी हो जायगी। डाकतर की बात सुनकर मन्दिरानन्द रोने लगी। मधुरिमा भी उनको देखकर रोने लगी। पीछे डाकतर दो चार सान्त्वना वाक्य कहकर चला गया। मन्दिरानन्द रोते रोते बोला, "इतने दिन पीछे अन्धे हुए। अब कुछ नहीं देख सकेंगे। उस समय हमने तुम्हारी बात क्यों नहीं मानी"

मधुरिमा गाढ़ स्वरसे बोली, "यह बात स्मरण करके रोने से अब क्या होगा ? अदृष्ट में जो था सो हुआ।"

मन्दिरानन्द बोले। "नहीं मधुरिमा तुम्हारी बात न मानकर जब कोई कार्य हमने किया है उसमें कोई न कोई अनिष्ट हुआ ही है। तुम मिथ्या अदृष्ट का दोष देती हो यह सब हमारा दोष है।

मधुरिमा मन्दिरानन्द के बिछौने के पास बैठकर आंचल से उनकी आंखे पोछ कर बोली, "अदृष्ट में लिखा था इसी से तुमने हमारी बात नहीं सुनी। अदृष्ट की लिपि किसी प्रकार से नहीं मिटती" मधुरिमा की बात सुनकर मन्दिरानन्द कुछ देर चुप रहकर बोले,

"मधुरिमा क्या हमको अब कुछ भी नहीं दिखाई पड़े-

मधुरिमा रोते रोते बोली, "यदि एक की आंख दूसरे को दी जाती तो ईश्वर जानते हैं अभी हम अपनी आंख तुमको देते। किन्तु जब वह नहीं हो सकता तब एक की आंख दोनों का काम चले ऐसा करेंगे। तुम जैसे हमको सब बात समझा देते हो उसी भांति हम अब जो देखेंगे तुमको बता देंगे।"

मन्दिरानन्द बोले, "हमको और एक बात का डर होता है, मधुरिमा हम तो अन्धे हुए, तुम अब हमको नहीं चाहोगी। अन्धा कहकर घृणा करोगी।"

मधुरिमा दोनों हाथ से मन्दिरानन्द का पांव पकड़ कर बोली, !

"हे स्वामी ! ऐसी बात मुंह से मत निकालो पूर्व में हम कभी कभी क्रोध करते थे अभिमान करते थे किन्तु अब हमको उसकी भी शपथ है। हम देवता गण से यही बरदान चाहते हैं कि जन्म जन्म तुम्हारे ही ऐसा स्वामी मिले।"

मन्दिरानन्द बोले, "हम भी यही चाहते हैं कि तुम्हारे ऐसी ही स्त्री हमको भी मिले। मधुरिमा तुम्हारी ऐसी पत्नी इस जगत में किसी की नहीं है।

मधुरिमा नहीं बोली, स्वामी के पास बैठकर केवल रोने लगी।

षष्ठ स्तवक।

'तुंग दक्षिण गिरि तें गिरौं पावक मरौं जलनिधि माहँ परौं ।
[illegible] यौवन निबाह नहीं [illegible] ।

बात तक इतनी भी नहीं सुनी॰ यह दशा देखकर ढुंढिराज आनन्दविग्रह से बोले,

"पण्डित जी मन की बात साफ साफ कह देना अच्छा होता है॰ हम घर से सबको ब्याह करने जाते हैं कह आए हैं॰ इससे बिना ब्याह किए जायंगे तो लोग ठट्ठा करेंगे॰ और सच्ची बात तो यह है कि हमारा ब्याह अभी नहीं हुआ है॰ इससे घर बसाने को हमको ब्याह करना बहुतही आवश्यक है, तुमने पहिले जो कहा था उसके अतिरिक्त हम स्वीकार करते हैं कि ब्याह करके हम कन्या को अपने घर ले जाएंगे॰ ढुंढि ने सोचा कि पहिले कन्या को घर में रखने का करार नहीं था अब वह यह स्वीकार करते हैं इससे गुणमञ्जरी को अब कोई बाधा न होगी और आनन्दविग्रह भी ब्याह के हेतु बहुत यत्न करेंगे॰

आनन्दविग्रह बोले, पर तुमको यह कन्या दे तब न अपने घर ले जाओगे॰ जो दशा देख रहे हैं इससे तो मुंह ऐसा मुह लेकर घर फिर जाना होगा इसी की अधिक सम्भावना है॰"

थोड़ी देर तक चुप रहकर ढुंढिराज फिर बोले, एक स्त्री न होगी तो हमारा संसारही नहीं चलेगा॰ इससे क्या कहें पन्द्रह रु॰ में यदि और भी कुछ कम करने से यह सम्पन्न हो तो हम इसमें भी राजी हैं॰

ढुंढिराज जैसे रुपया का मर्म समझते थे वैसा और कोई नहीं समझता॰ रुपया उनके शरीर का शोणित है॰ इससे रुपया कम लेने से गुणमञ्जरी उनको कन्यादान देगी यह विचार उनके मनमें होना आश्चर्य नहीं है॰ आनन्दविग्रह अब उनके

कि ढुंढिराज को कम रुपया लेकर व्याह करने में सम्मत है।

इससे यह ढुंढिराज को निराश होकर जाना होगा यही विश्वास करने लगे। बोले, "यह लोग धनी हैं दस पाँच रुपया के लोभ से यह लोग न मानेंगे"

आनन्द विग्रह के मनकी इच्छा यह थी कि विना पण के ढुंढि सम्मत हो तो अच्छी बात हो।

वस्तुतः वही हुआ। फिर थोड़ी देर चिन्ता करके ढुंढिराज बोले,

"हमको स्त्री की अति आवश्यकता है। और व्याह करने आए हैं, व्याह न करके जायेंगे तो लोग हंसेंगे इससे हम बिना पण के भी विवाह करने को सम्मत हैं।"

यह बात आनन्द विग्रह के मन की हुई। सोचे गुणमञ्जरी के पायों पड़ना होगा तो पड़ेंगे, यदि व्याह के कारण अनाहार धरना देना होगा तो देंगे किन्तु सम्बन्ध करेंगे क्योंकि ऐसा धनिका फिर न मिलेगा। ऐसा घर इतने कम खरच में फिर खोजे भी न मिलेगा। और ऐसा सम्बन्ध न करने से उनकी कुल मर्यादा भी रहेगी। यही सब सोच करके वह फिर गुणमञ्जरी के समझाने को अन्तःपुर में गए। इधर गुणमञ्जरी ने दृढ़ प्रतिज्ञा कर ली थी कि ढुंढिराज के साथ कन्या का व्याह कभी नहीं करना। उसकी प्रतिज्ञा कोई कभी भंग नहीं कर सकता था। आनन्द विग्रह ने समझाया कि ढुंढिराज के साथ व्याह करने से रुपया भी नहीं लगेगा और कुल भी बना रहेगा। वर भी नितान्त बुड्ढा नहीं है। गुणमञ्जरी क्रोध से बोली, "दमड़ी रुपया का यही विधि है तो उनका

रुपया हम तुमको देते हैं तुम अपने घर जाओ।"

आनन्द विग्रह कातर स्वर से बोले, "किन्तु कुल रक्षा का क्या उपाय होगा ?"

गुणमञ्जरी पूर्व की भांति क्रोध से बोली, "हमको कुल से कोई प्रयोजन नहीं है। कुल न रहने से ही हमारा कल्यान है। हमारे पिता ने कुल क्रिया किया था इसीसे हमको यावत जीवन दुःख भोगना पड़ा। अब हम कुल क्रिया करके चन्द्राभा को चिरकाल के हेतु दुःख भोगी करें यह हमसे कभी नहीं होगा" आनन्द विग्रह थोड़ी देर चुप रहकर बोले,

"तुमको कौन बात का दुःख हुआ ? तुमको किस बात की कमती है ?" गुणमञ्जरी फिर न सह सकी वह चिल्लाकर बोली, "कौन बात का दुःख हैं ? क्या कमती है? कमती और दुःख यही है कि न तुम मरते हो न हम मरते हैं" यह कह कर रोते रोते वह वहां से उठकर चली। आनन्द विग्रह उनका आंचल पकड़ कर बोला, "

और एक बात सुनलो।

गुणमञ्जरी बोली "तुम्हारी बात जो सुनती है उसी को जाकर सुनाओ हम नहीं सुन सकते" यह कहकर बल से अपना आंचर छुड़ाकर वहां से चली गई।

सप्तम स्तवक।

प्रतिज्ञा।

"कार्यं वा साधयेयं शरीरं वा पातयेयं"

आनन्दविग्रह को एक मात्र उपाय और यह ... था कि

अनाहार से धरना देना• अब यही उपाय अवलम्ब करेंगे स्थिर करके बाहर आए• पाठक वर्ग को यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि आनन्दविग्रह अधुनातन अंगरेजी परिमार्जित युवक नहीं था स्त्री को प्रहार करना अविधेय है यह वह स्वप्न में भी नहीं जानता था• उनको यह दुःख होने लगा कि गुणमञ्जरी आज उनके घर में न हुई• आज वह हमारे घर में होती तो मारे बेंत के हाड़ी और चमड़ी के सीधी कर देते • किन्तु गुणमञ्जरी के नैहर में यह चिन्ता करते के क्या करेंगे• मौन भाव से आकर ढुंढराज के पास बैठे•ढुंढिराज ने उनको उदास देख कर पूछा, "क्या खबर है?" वह अब तक यही चिन्ता करते थे कि एकबारगी सब रुपया न लेंगे कह दिया सो अच्छा काम नहीं किया • कुछ कम ग्रहण करेंगे कहते तो अच्छा होता• हाय ! घर में लक्ष्मी आती थी उसको हमने नहीं आने दिया• किन्तु आनन्दविग्रह को उदास देख कर उनका चिन्तादग्ध चित्त कुछ शीतल हुआ• सोचे यदि बिना पण के कन्या देना न स्वीकार करे तो पण न लेंगे यह कहना अन्याय नहीं हुआ है।

आनन्दविग्रह ढुंढिराज की बात का उत्तर न देकर जहां बैठे थे वहांहीं लेट गए• ढुंढिराज ने पूछा "क्या खबर है?" आनन्दविग्रह कातर स्वर से बोले, "और क्या खबर है किसी तरह नहीं मानती उसकी प्रतिज्ञा है कि वह हमारा कुल नष्ट करेगी• हमारी भी प्रतिज्ञा है वह जब तक हमारी बात न स्वीकार करेगी तब तक अनाहार यहीं पड़े रहेंगे•"

ढुंढराज कुछ विस्मित होकर बोले "क्या हमको भी अ-

नाहार पड़ा रहना होगा ?"

आनन्दविग्रह बोले "नहीं तुमको नहीं रहना होगा"

अनन्तर नहाने के समय गोकुलोत्सव ने आनन्दविग्रह को नहाने कहा। आनन्दविग्रह बोले।

"हम नहाएंगे भी नहीं, खाएंगे भी नहीं, हम यहां अनाहार प्राण त्याग करेंगे"।

गोकुलोत्सव ने बहुत भांति से विनय किया किन्तु आनन्द विग्रह नहीं माने। तब गोकुलोत्सव अपनी भगिनी के पास जाकर बोले, "बहिन! जिसमें ब्राह्मण का कुल रहे वह करो" गुणमञ्जरी क्रोध से बोली।

"कुल जायगा तो हमारा क्या हम ऐसे पात्र को कन्या कभी न देंगे"।

गोकुलोत्सव निरुपाय होकर बोले, "अच्छा वही होगा। हम प्रतिज्ञा करते हैं तुम्हारे मत से अन्यथा नहीं करेंगे। तुम एक बेर कह दो कि ढुंढिराज को कन्या देंगे, तब हमारे प्राण बचैं और हमारे द्वार पर ब्रह्महत्या न हो"।

गुणमञ्जरी बोली "हम जो कहैंगे सो करोगे ?" गोकुलोत्सव बोला "करैंगे"।

गुणमञ्जरी, अच्छा तब जो कहने से नहाए खाए सो कहो।

गुणमञ्जरी ने क्या संकल्प करके गोकुलोत्सव को प्रतिश्रुत कराया यह पीछे प्रकाश होगा। आपाततः आनन्दविग्रह ने आश्वस्त होकर स्नान आहार किया।

अष्टम स्तवक।

संदेह।

न जातु विप्रियं भर्त्तुः स्त्रिया कार्य्यं कथंचन।

स्त्रीलगों का चरित्र और पुरुष का भाग्य देवतालोग भी नहीं जानते। पूर्ण की भगिनी और भगिनीपति इतने दिन सद्भाव से काल वितीत करते थे। अब मन्दिरानन्द की आंख गई है। इससे मधुरिमा को अब उचित है कि पहिले से विशेष उनको यत्न करे। किन्तु क्या आश्चर्य है कि इतने दिन के पीछे उन लोगों में विवाद होने की सम्भावना उपस्थित हुई। झगड़ा भी एक दासी की बात में। वह दासी बाल्यकाल से मन्दिरानन्द के यहां है। लखनऊ आने के समय मन्दिरानन्द उसको साथ ले आए थे। उस दासी के द्वारा संसार का कार्य निर्वाह होता था किन्तु मन्दिरानन्द की आंख जब गई तब एक नौकर की आवश्यकता हुई। सर्वदा उनको डाकतरखाने जाना पड़ता था। किन्तु अब आंख न रहने से आप जाकर गाड़ी भाड़ा नहीं कर सकते पूर्ण भी लखनऊ में नहीं है कि उससे आज काल कोई सहायता मिलती। दासी गांव की थी वह नगर का मार्ग कुछ नहीं जानती थी। इन्हीं सब कार्यों से एक नौकर रक्खा गया, किन्तु दासी और नौकर में ऐसा विवाद उपस्थित हुआ कि दासी बहुत दिन की पुरानी थी तब भी मधुरिमा ने उसको निकाल दिया। दासी ने रोते रोते मन्दिरानन्द के पास जाकर अपनी निर्दोषिता का प्रमाण देने के वास्ते बहुत कुछ कहा। किन्तु जब देखा मन्दिरानन्द भी उसको रखने में सम्मत नहीं है, तब इतना कहकर चली गई " इतने दिन हम से कोई बात नहीं

युवक ने मधुरिमा को दरवाजे के आड़ में बुलाकर स्पष्ट स्वर से कुछ कहा। अनन्तर मधुरिमा ने निःशब्द से दरवाजा मन्द करके, युवक को पीछे पीछे लेकर गृह में प्रवेश किया। मधुरिमा स्वाभाविक पांवों का शब्द करके जाने लगी। और युवक भी निःशब्द से जाने लगे। दोनों अन्तःपुर में जा रहे हैं इतने में मन्दिरानन्द ने मधुरिमा को पुकार कर पूछा, "दरवाजे में कौन था ?" मधुरिमा अम्लानमुख से बोली, "कोई तो नहीं।" मन्दिरानन्द बोला, "फिस् फिस् करके किससे बातें करती थी ?" मधुरिमा बोली, "किसी से तो नहीं" मन्दिरानन्द ने दीर्घ निश्वास त्याग करके मौनावलंबन किया। मधुरिमा मन्दिरानन्द की ओर देखकर मृदु हंसकर वहां से चली गई।

मधुरिमा क्या यह तुमको उचित है ? जिस स्वामी को तुम देवता तुल्य जानती थी, आज उसकी आंख गई है इससे उनको इतना हेय ज्ञान करती हो। ?

धृतराष्ट्र अन्धे थे इससे गान्धारी निज आंख वस्त्र से बान्धे रहती थी। तुमको क्या यही उचित है ? मधुरिमा स्वामी के साम्हने से चली गई। आगन्तुक युवा भी उसके पीछे पीछे चला। उस गृह से दूसरे गृह में प्रवेश करने के समय युवक का जूता चौकठ में लगकर शब्द हुआ। उस शब्द ने मन्दिरानन्द के कर्ण कुहर में प्रवेश किया। मन्दिरानन्द के मन में आया मानो कोई जूता से उनका हृदय आहत करता है। उन्हों ने मधुरिमा को पुकार कर पूछा, "किसका शब्द हुआ ?" मधुरिमा बोली, "कहां शब्द हुआ ?" मन्दिरानन्द फिर चुप होकर बैठे। मधुरि-
के पास गई। और उसके साथ बात करने लगी।

मन्दिरानन्द सोचे• नौकर प्रकाश्यभाव से निकल कर फिर गुप्तभाव से आया है फिर धीरे से निकलकर प्रकाश्यभाव से प्रवेश करेगा।

मधुरिमा युवक के साथ बहुत देर पीछे बाहर फिर आई। और युवक को बोली, "इसी समय जाओ। नहीं तो प्रकाश हो जायगा। यह कहकर धीरे से बाहर के दरवाजे के पास जाकर युवक को बिदा कर दिया किन्तु फिर दरवाजा बन्ध करने का शब्द हुआ मन्दिरानन्द बोला, "कौन है?" मधुरिमा ने देखा अब नहीं छिप सकता इस्से बोली, "नौकर अभीतक आया कि नहीं देखने गए थे• यह कहते २ फिर दरवाजे का शब्द हुआ• मधुरिमा ने जाकर दरवाजा खोल दिया। अबकी नौकर ने प्रवेश किया और बात करते २ घर के भीतर आया। मन्दिरानन्द सोचे, "अबकी प्रकाश्य प्रवेश किया है। "

नवम स्तवक।

शयन मन्दिर में•

"तदलं त्यज्यतामेष निश्चयं पाप निश्चयं। "

सूर्य अस्तमित हुआ। जगत गाढ़ तिमिरावृत हो गया• उससे विशेष गाढ़तर तिमिर ने मन्दिरानन्द के हृदय को आच्छन्न किया। जगत के साथ मानव हृदय की सम्पूर्ण एकता है• अरुनोदय से केवल जगत हंसता है यही नहीं है समस्त जीव लोक सूर्यलोक से प्रफुल होता है। लाख चिन्ता हो किन्तु रात की अपेक्षा दिवाभाग में मन निरुद्वेग रहता है।

यामिनी आप मलिन है इसमे सबको मलीन करने से व

कुल होती है।

रजनी के आगमन से मन्दिरानन्द का हृदय बहुत ही तापित होने लगा। मधुरिमा ने रन्धन करके मन्दिरानन्द को भोजन करने बुलाया। मन्दिरानन्द ने भूख नहीं है कहकर भोजन नहीं किया।

और सब ने आहार किया। नौकर लोग जाकर अपने स्थान पर सोए। मधुरिमा स्वामी के बिछौने के पास बैठकर पंखा हांकने लगी। मन्दिरानन्द ने चिन्ता किया, मधुरिमा हमको सुलाने के वास्ते पंखा हांक रही है। इस्से बोले, "आज तुमको पंखा नहीं हांकना होगा हमको ज्वरांश है और काग-रहा हैं। तुम सो रहो।

मधुरिमा ने स्वामी के सिर में हाथ लगाया। मन्दिरानन्द के सिर में वह हाथ आग की भांति लगा। अनन्तर मधुरिमा सो गई। मन्दिरानन्द थोड़ी देर लेटकर पलङ्ग पर उठकर बैठकर सोचने लगे, ऐसी स्त्री के साथ कैसे सहवास करेंगे, मधुरिमा को वह विषधर सर्प की भांति जानने लगे। बहुत देर तक नाना प्रकार की चिन्ता करके प्रकाश्यरूप से कहने लगे।

"मधुरिमा! तुम्हें क्या यही उचित है? तुम ऐसी हो जाओगी यह हम स्वप्न में भी नहीं जानते थे। हम अब अन्धे हुए हैं, इस्से आशा थी कि तुम अब हमको विशेष यत्न करोगी? सो न करके तुमने हमको त्याग किया" इतना कहकर मन्दिरानन्द रुलाई नहीं रोक सके। उनके उच्छ्वास से मधुरिमा की निद्रा भंग हुई किन्तु वह जागी है इसको प्रगट नहीं किया। चुप होकर मन्दिरानन्द की बात सुनने लगी। मन्दिरानन्द

फिर कहने लगे॰ "मधुरिमा क्षमा करो तुमको वृथा हम दोष देते हैं॰ यह दोष तुम्हारा नहीं है॰ यह हमारे अदृष्ट का दोष है॰ तुमने तो हमको उसी दिन पढ़ने को निषेध किया था॰ हमने तुम्हारा कहना नहीं माना॰ पढ़ा इसी से आंख गई॰ हमारा अदृष्ट यदि अच्छा होता तो सर्वदा तुम्हारी बात सुन-कर उस दिन तुम्हारी बात क्यों नहीं मानथे॰ हमारा अदृष्ट अच्छा होता तो तुम हमको क्यों त्याग करती॰ किन्तु मधुरिमा तुम्हारी आंख यदि अन्धी होती तो हम कभी तुमको न अना-दर करते॰ कभीं तुमको त्याग करके दूसरा व्याह न करते॰ मधुरिमा तुम्हे आंख है किन्तु तुम हमारा हृदय नहीं देखती हो॰ हम तुमको कितना चाहते हैं तुम्हारे बिना हम जी नहीं सकते यह तुमको नही मालुम है॰ तुम कहोगी "अन्धे को चाहने की हमको क्या आवश्यकता है" सत्य है किन्तु मधुरि-मा तुम्हारा अन्तःकरण मृणाल से भी कोमल है॰ सो तो हम जानते हैं॰ हमारे चाहने के कारण नहीं हमारे अन्तर का कष्ट एक बार देखने से तुम कभी नहीं हमको त्याग सकती थीं॰ यदि कोई पराया होता तो भी तुम उसका कष्ट नहीं सह्य कर सकती, फिर हमारा कष्ट तुम सह सकतीं यह तो कभी सम्भवही नहीं है॰ मधुरिमा अब भी फिरो॰ तुमने जो किया सो किया॰ अब हमको मत त्यागो॰ सहस्र दोष में दोषी होतो भी मधुरिमा तुम हमारी हो हो॰ एकबार तुम हमको तुम हमारेही हो यह कहकर पुकारो तो हमारा सब दुःख जावें॰" इतना प्रकाश से कहकर मन्दिरानन्द चुप हुए॰ मधुरिमा के आंख से आंसू बहने लगा॰ किन्तु वह प्रकाश में कुछ नहीं...

दशम स्तवक॰

व्याह॰

जेहि दिसि बैठे नारद फूली। तेहि दिसि तेहन विलोकेउ भूली॥

चन्द्रप्रभा के व्याह का दिन स्थिर हुआ है॰ आनन्दविग्रह आनन्द मज्लिस में बह रहे हैं॰ ढुंढिराज दुःख में डूब रहे हैं॰ आनन्दविग्रह के ऊपर उनको बड़ा क्रोध हुआ है॰ मन मन में चिन्ता कर रहे हैं॰ "आनन्दविग्रह को अन्त में धरना देना पड़ा॰ यही धरना पहिलेही देते तो अच्छा होता॰ तो हमारी इतनी क्षति क्यों होती॰"

गोकुलोत्सव दिन भर व्याह के उद्योग में व्यस्त हैं, भगिनीपति के पास बैठकर बात करने को फुरसत नहीं है॰ क्रम से सब उद्योग हो गया, कल रात को व्याह है॰ ढुंढिराज को पूर्वरात निद्रा हो नहीं हुई॰ चन्द्रप्रभा मिलेगी इस लोभ से उनका चित्त उछलने लगा॰ किन्तु क्रक पद्य नहीं मिलेगा यह सोचकर दुःख भी होने लगा॰ आनन्दविग्रह के ऊपर उनको बड़ा ही क्रोध हुआ उन्होने क्यों थोड़ी देर पहिले धरना नहीं दिया यही उनका दोष है॰

व्याह के दिन ढुंढिराज और आनन्दविग्रह दोनो ने उपवास किया॰ निमन्त्रित व्यक्ति लोग धीरे धीरे आने लगे॰

व्याह का लग्न बहुत रात बीते है॰ सुतरां सब कोई बैठक में बैठकर नाना विध गल्प और दुनहे को लेकर हंसी ठट्ठा करने लगे॰

थोड़ी देर पीछे ढुंढिराज बोले, गोकुलोत्सव कहां है?" विग्रह बोला, "क्यों?" ढुंढिराज बोला॰ "उनके साथ

आनन्दविग्रह बहुतही अप्रतिभ होकर बोले "हां—नहीं० सोई तो—सो भी नहीं—किन्तु कुलीन के लड़के व्याह के समय कुछ पाते हैं"

गोकुलोत्सव बोला "यह आपका बड़ा अन्याय है"

आनन्दविग्रह बोला "जाने दो जाने दो यह सब बात इस समय जाने दो पीछे होगी अब तुम इनके कुटुम्ब हुए दस पांच रुपया मांगने में क्या इनको नहीं दोगे।

गोकुलोत्सव बोला "वह स्वतन्त्र बात है ढुंढिराज को यदि कन्या देंगे तो क्या दो चार रुपया वह चाहेंगे तो नहीं पावेंगे?"

गोकुलोत्सव की बात के भाव में बोध हुआ कि अभी कन्यादान में भी विशेष सन्देह है० तब आनन्दविग्रह और ढुंढिराज बोले "यह कैसी बात है?"

गोकुलोत्सव बोला "बीस रुपया न पाने से वह तो व्याह नहीं करेंगे न? इसी से कहा"

गोकुलोत्सव की बात सुन कर ढुंढिराज का हृदय कांप उठा० सोचे रुपया मांग कर अच्छा नहीं किया।

गोकुलोत्सव और दो चार मनुष्य भीतर गए० ढुंढिराज बाहर इसी सोच में बैठे हैं कि रुपया क्यों मांगा० इतने में ग्रह के अन्तःपुर में वेदपाठ और होम आदि का शब्द हुआ० उसी समय गोकुलोत्सव फिर बाहर आए० आनन्दविग्रह बोला

उपस्थित हुआ?"

"काम तो पड़ता है" स्वर भंग की भांति

इसका अर्थ क्या है?" गोकुलोत्सव

बोले "इसका अर्थ यही है कि व्याह होगया। इसका अब और क्या अर्थ हो सकता है ?" यह कह कर सभास्थ सबको पुकार कर बोले "आप लोग उठिए आहार का उद्योग होगया है"।

निमन्त्रित व्यक्तिगण प्रतिवासी आदि सब कोई इस व्यापार को पूर्व से जानते थे। इससे किसी को इस बात में आश्चर्य नहीं हुआ। सब कोई उठने के समय ढुंढिराज का कान मल मल कर जाने लगे।

ढुंढिराज चिल्ला २ कर कहने लगे "दोहाई मजिस्टर साहब की, दोहाई कम्पनी बहादुर की" आनन्दविग्रह बोले "ढुंढिराज चुप रहो। व्यापार क्या है जरा समझने दो" आनन्दविग्रह जितना मना करते थे उतना ही ढुंढिराज "दोहाई मजिस्टर साहब की हमारी जात भी लिया, हमारा कान भी मल रहे हैं" यह कह कर रोने लगा।

गोकुलोत्सव ने आनन्दविग्रह का हाथ पकड़ कर कहा। "व्यापार सुनने चाहते हो कि देखने चाहते हो?"

आनन्दविग्रह बोला "सुनने भी चाहते हैं देखने भी चाहते हैं" तब हमारे साथ आओ, यह कह कर गोकुलोत्सव आनन्दविग्रह को साथ लेकर गृह के अन्तःपुर में गए। उसी साथ ढुंढिराज भी गए। जिस स्थान में दुलहा और कन्या थे [illegible]

एकादश स्तवक।

उपसंहार ।

"किमपि मनसो सम्मोहो तदा मत्तवानभूत्।"

चन्द्रप्रभा के व्याह में मधुरिमा का न्योता हुआ था। व्याह हो जाने से वह अपने घर आकर मन्दिरानन्द के पास आई। मन्दिरानन्द अपने बिछौने पर लेटे थे, मधुरिमा बोली, "तुमको यदि एक सुसमाचार हम दें तो हमको तुम क्या दोगे?" मन्दिरानन्द बोला, कौन हैं? मधुरिमा! क्या सुसमाचार है?"

मधुरिमा बोली, "पागे हमको क्या दोगे बोलो?"

मं० "यह अन्धे को तुमसे क्या अदेय है?"

म० "हम यह सुनने नहीं चाहते। तुम जरा हसोगे कि नहीं और हमारा समस्त अपराध क्षमा करोगे या नहीं?"

मन्दिरानन्द गम्भीर स्वर से बोले, "अन्धे के क्रोध से तुम्हारा क्या होगा?"

"तब तुम कुछ नहीं दोगे, —हम वैसेही कहते हैं। चन्द्रप्रभा के साथ पूर्णप्रकाश का व्याह हो गया।"

मं० "यह कैसा? ढुंढिराज का क्या हुआ?"

म० "उसका शिशुपाल का व्याह हुआ है।"

मन्दिरानन्द बोले, क्या हुआ सब स्पष्ट कहो।"

यहां आने को पथ लिया० पूर्व पथ पाकर यहां आया, आकर सिर की कसम देकर हमें निषेध किया कि तुम्हारे कान में भी यह बात न आय० हमने बहुत कहा तुमको कहने में कोई क्षति नहीं है तब भी वह नहीं माना० हां एक दिन आते हुए दासी ने उसको देखा था किन्तु सन्ध्या के पीछे आता था इससे पहिचान न सकी० हमने जाना मोंकर ही चुप चाप निकल जाता है यह सोचकर उसके मन में सन्देह हुआ०

इसको बुरी बात सोचो इससे हमने उसको निकाल दिया० जाने के समय वह तुमको कुछ कह गई थी इससे तुम्हारे मन में सन्देह हुआ है० हम दिन रात की तुम्हारी बात सुनकर हमने जाना० हम उसी समय सब बात तुमको कहते० किन्तु पूर्व ने कसम दिया था इससे नहीं कहा० भला हम क्या इस जन्म में तुमको त्याग सकती हैं ? तुम्हारे ऐसा—मन्दिरानन्द इतना सुनकर मधुरिमा का हाथ पकड़ कर बोले, "बस रहने दो हम सब समझ गए० मधुरिमा हमने बड़ा अपराध किया है क्षमा करो०"

मधुरिमा बोली, "हम तुमको क्षमा करेंगी ? तुम हमको यह क्षमा करो कि पूर्व के कहने से हमने यह सब बात तुम से छिपाया था० हमारा बड़ा कठिन प्राण है कि तुम्हारा यह कई दिन का कष्ट देखकर भी हमने गुप्त बात प्रकाश नहीं किया० तुम्हारी स्त्री होना दूर रहे हम तुम्हारी दासी के योग्य भी नहीं हैं० पूर्व की भांति मधुरिमा का हाथ पकड़ कर मन्दिरानन्द बोले, "तुम्हारा दोष इसमें क्या है ? तुमको कसम देकर कहा था इससे तुमने हमसे नहीं कहा दोष हमारा है० हम जो दासी की बात सुन कर तुमको कलंकिनी सोचे थे